बिज़नेस स्टैंडर्ड
वर्ष 12 अंक 52

परीक्षण का विषय

वैश्वीकरण ने शासन के काम को अत्यंत जटिल बना दिया है। इस क्षेत्र में विशेषज्ञता और कौशल की मांग पहले से बहुत बढ़ गई है। सरकार ने भारतीय प्रशासनिक सेवा तथा नौकरशाही की अन्य सेवाओं के लिए पार्श्व नियुक्ति की योजना शुरू की है जिसके तहत सबसे पहले विभिन्न विभागों में संयुक्त सचिव के 10 पदों के लिए निजी क्षेत्र के आवेदकों का मार्ग प्रशस्त किया। यह व्यापक प्रतिभा तक पहुंच बनाने का समझदारी भरा तरीका है। अब तक केंद्रीय लोकसेवा आयोग ने नौ उम्मीदवारों का चयन किया है। ये उम्मीदवार नागर विमानन, कृषि, वित्त, नौवहन के साथ-साथ नवीकरणीय ऊर्जा और पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन जैसे मंत्रालयों में काम करेंगे।

निजी क्षेत्र के विशेषज्ञों को विशिष्ट वेतन भत्तों के साथ नौकरशाही में सीधे शामिल करने को विभिन्न सरकारों के उन प्रयासों की निरंतरता के साथ देखा जा सकता है जिसके तहत सरकारें शासन में बाहर से विशेषज्ञता लाना चाहती थीं। ये कवायद आमतौर पर नौकरशाही के संस्थागत ढांचे से बाहर ही की गईं। उदाहरण के लिए पहले योजना आयोग में, फिर नीति आयोग में, मुख्य आर्थिक सलाहकार कार्यालय में तथा विभिन्न मंत्रालयों के सलाहकारों के पदों पर ऐसी नियुक्ति की गई थीं। ताजा कदम केंद्रीय लोक सेवा आयोग की संस्थागत दृष्टि के लिहाज से एक बड़ी छलांग के समान है। विदेश मंत्रालय ने भी कुछ वर्ष पहले ऐसा ही प्रयास करते हुए बाहरी प्रत्याशियों को अल्पकालिक अनुबंध पर रखने का प्रयास किया था लेकिन इसे नकारते हुए कहा गया था कि रिक्तियों को अन्य मंत्रालयों के नौकरशाहों से भरा जाए।

निजी क्षेत्र के विशेषज्ञों की भर्ती के साथ कई तरह की संस्थागत चुनौतियां जुड़ी हुई हैं। बहरहाल, इनमें से प्रमुख चुनौती है नियुक्त लोगों की गुणवत्ता। बाहरी विशेषज्ञों को एक खास शैक्षणिक मानक पूरा करना होता है और जिन लोगों को चुना जाता है, उन्हें केंद्रीय लोकसेवा आयोग के साक्षात्कार से गुजरना होता है।

अभी यह स्पष्ट नहीं है कि यह बाहरी विशेषज्ञों की नियुक्ति का सर्वश्रेष्ठ तरीका है या नहीं। दूसरी चुनौती यह है कि सरकार इनकी विशेषज्ञताओं का कितना लाभ ले सकती है। उसके लिए एक खास तरह का माहौल बनाना होगा ताकि विशेषज्ञ काम कर सकें। इसके लिए नौकरशाही को भी थोड़ा सहयोग करना होगा।

यह काम आसान नहीं है क्योंकि विशेषज्ञों और आम नौकरशाहों के बीच तनाव अनिवार्य है। इसके अलावा बाहरी लोगों के लिए प्रशासनिक सेवा के नौकरशाहों के साथ मिलकर काम करना आसान नहीं है। उदाहरण के लिए जिस प्रकार आईएएस ने सरकार पर यह दबाव बनाया कि वह केंद्रीय बैंक के गवर्नर या मुख्य सांख्यिकीविद के रूप में उसके लोगों की नियुक्ति करे, वह विचारणीय है। जिन लोगों को बाहरी विशेषज्ञ के रूप में चुना जा रहा है, उनके लिए फाइलों और मंत्रियों की बैठक तक पहुंच बनाना भी आसान नहीं है। ऐसे में काफी कुछ इस बात पर निर्भर करता है कि राजनीतिक कार्यपालिका इन बाहरी विशेषज्ञों को किस हद तक काम करने देती है।

एक बार यह प्रक्रिया शुरू होने के बाद सरकार के लिए यह भी आवश्यक है कि वह नियामकीय प्रमुखों की खोज का दायरा भी बढ़ाए। फिलहाल, अल्पावधि के लिए आरबीआई को छोड़कर नियामकों के चयन में सेवानिवृत्त नौकरशाहों और सरकारी कंपनियों के प्रमुखों को ही स्थान दिया जा रहा है। सरकार के पास इस प्रवृत्ति को जारी रखने की कोई वजह नहीं है। देश के निजी क्षेत्र में प्रतिभाओं की भरमार है। सरकार इनकी सहायता से अपने नीतिगत निर्णयों की प्रक्रिया में सुधार कर सकती है। व्यापक संदर्भ में देखें तो नौकरशाही में पार्श्व भर्तियां परीक्षण की दृष्टि से बेहतर मामला हैं।

अजय मोहंती

भारतीय निर्वाचन प्रक्रिया और नागरिक कर्तव्य

देश में निर्वाचन की प्रक्रिया, राजनीतिक दलों और प्रत्याशियों के व्यवहार तथा बतौर नागरिक हमारे कर्तव्यों के बारे में विस्तार से अपनी राय और कुछ सुझाव रख रहे हैं **नितिन देसाई**

अप्रैल 1947 में भारत की संविधान सभा ने यह तय किया कि वह आजादी की लड़ाई के दौरान उठी मांग के अनुरूप सार्वभौमिक मताधिकार के आधार पर चुनाव कराएगी। एक तरह से यह औपनिवेशिक काल की सीमित मताधिकार की चुनाव व्यवस्था पर प्रतिक्रिया भी थी। उदाहरण के लिए सन 1935 के चुनाव में देश के कुल वयस्कों के केवल पांचवें हिस्से का नाम मतदाता सूची में शामिल किया गया था। इस सूची में मतदाताओं के नाम समुदाय, पेशे आदि के हिसाब से वर्गीकृत किए गए थे।

नवंबर 1946 में संविधान सभा सचिवालय (सीएएस) ने सार्वभौमिक आधार पर मतदाता सूची तैयार करने का काम शुरू किया। चूंकि इसका सीधा संबंध नागरिकता से था। इसलिए निर्वाचन सूची की तैयारी से जुड़े प्रयास, इस प्रश्न के उत्तर से भी प्रत्यक्षतया संबंधित थे कि वास्तव में असल भारतीय कौन हैं? यह कोशिश थी एक ऐसा नागरिक राष्ट्र बनाने की जहां धर्म या जातीय संदर्भ न दिए जाएं।

सीएएस ने जिन नौकरशाहों को निर्देशों के प्रवर्तन का काम सौंपा, उन्होंने सार्वभौमिकता के सिद्धांत को कुछ ज्यादा ही गंभीरता से ले लिया। उदाहरण के लिए तत्कालीन बॉम्बे के कलेक्टर ने कहा कि सार्वभौमिकता का तकाजा है कि जिन लोगों के पास कोई स्थायी पता नहीं है, उन्हें भी मतदान करने का अधिकार मिले और ऐसे हर व्यक्ति को मतदान का अधिकार मिलना चाहिए जो यह साबित कर सके कि उसका रहवास उस क्षेत्र में है। शरणार्थियों से जुड़े जटिल मुद्दों को भी हल कर लिया गया। इस प्रक्रिया पर किया गया ओर्नित शानी का अध्ययन बताता है कि कैसे सार्वभौम मतदाता सूची तैयार करने की इस प्रक्रिया ने राष्ट्रीय एकता की भावना उत्पन्न करने में मदद की और राष्ट्रीयता का बोध पैदा किया। (ओर्नित शानी, हाऊ इंडिया बिकेम डेमोक्रेटिक, पेंग्विन/वाइकिंग, 2018 पृष्ठ 7)

अपनी लोकतांत्रिक व्यवस्था की बुनियाद की ओर ध्यान आकर्षित करने का मकसद यह बताना है कि निर्वाचन प्रक्रिया को संचालित करने वाले सरकारी अधिकारियों पर भी काफी कुछ निर्भर करता है। जनता को यह यकीन दिलाना चाहिए कि वे पूरी तरह निष्पक्ष और निरपेक्ष हैं तथा वे चुनाव तथा आदर्श आचार संहिता को कड़ाई से लागू करने के लिए प्रतिबद्ध हैं। चुनाव प्रक्रिया आरंभ हो चुकी है और ऐसी आशंका है कि चुनाव की निगरानी करने वाली सर्वोच्च संस्था इस बार वैसी निरपेक्ष नहीं है जैसा कि हम उसे देखते आए हैं। सेवानिवृत्त नौकरशाहों ने कुछ खास चूक को लेकर जो पत्र लिखा, उसे व्यापक कवरेज मिला (स्पष्टीकरण: मैंने भी उस पत्र पर हस्ताक्षर किए हैं)। इन चिंताओं को हल किए जाने के संकेत मिल रहे हैं और उम्मीद की जानी चाहिए कि जल्दी ही निर्वाचन अधिकारियों की निष्पक्षता में भरोसा बहाल हो जाएगा।

वैधता इस बात पर भी निर्भर करती है कि मतदाता, मतदान और मतगणना की प्रक्रिया की निष्पक्षता पर यकीन करें। इलेक्ट्रॉनिक वोटिंग मशीन (ईवीएम) के इस्तेमाल को लेकर कई सवाल उठे और कहा गया कि उनसे छेड़छाड़ की जाती है। निजी तौर पर मेरा मानना है कि भारत में ईवीएम को लेकर जो सुरक्षा इंतजाम किए गए हैं, वे पर्याप्त हैं। हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि पुरानी मतदान पत्र वाली व्यवस्था में तो बूथ कैप्चरिंग के जरिए ऐसी छेड़छाड़ करना और आसान था। बहरहाल, मतदाताओं का भरोसा बरकरार रखना महत्त्वपूर्ण है और इसलिए वोटर वेरीफाइड ऑडिट ट्रेल (वीवीपैट) का इस्तेमाल काबिलेतारीफ है। एक सवाल यह भी है कि इनमें से कितने नमूने रखे जाएंगे और कितनों की गिनती की जाएगी। जो जानकारी अब आ रही है, उसके मुताबिक प्रति विधानसभा क्षेत्र एक के बजाय अब पांच वीवीपैट चुनी जाएंगी और ईवीएम से उनका मिलान किया जाएगा। पांच वीवीपैट को चुनने का एक तरीका यह है कि दूसरे स्थान पर आने वाले प्रत्याशी से तीन और तीसरे स्थान पर आने वाले प्रत्याशी से दो पर्चियां चुनने को कहा जाए। निर्वाचन अधिकारियों को निष्पक्ष होना होगा और जो राजनेता चुनावी होड़ में होंगे, वे यकीनन अंतर को बढ़ाकर पेश करेंगे, तथ्यों के साथ तोड़ मरोड़ करेंगे और आक्षेपों का प्रयोग करेंगे। परंतु जब यह सब उस मोड़ पर पहुंच जाए जहां देशवासियों के बीच धर्म या जातीय पहचान के आधार पर भेद करने का प्रयास किया जाए तो राजनीतिक प्रकिया प्रत्यक्ष तौर पर समता और नागरिक राष्ट्रीयता के संवैधानिक मानक को चुनौती देती है। यह सीमा पार नहीं होनी चाहिए लेकिन इन चुनावों में ऐसा हो रहा है। आदर्श आचार संहिता में ऐसे प्रावधान हैं कि चुनाव आयोग चाहे तो उल्लंघन करने वालों के खिलाफ कदम उठाए।

मौजूदा राजनीतिक बहस का चिंतित करने वाला एक और पहलू है। राजनेता एक दूसरे के खिलाफ जिस भाषा का प्रयोग कर रहे हैं, वह निहायत असभ्य और असंयमित है। विपक्ष का सम्मान संसदीय लोकतंत्र में अहम है। इतना ही नहीं जब राजनीतिक प्रक्रिया कई दलों तक फैली हो और गठबंधन सरकारों का दौर हो तब निंदा और क्रोध की यह भावना राजनीतिक स्थिरता को नुकसान पहुंचा सकती है। मीडिया कवरेज का स्वरूप बदलने से इस विकृत राजनीतिक बहस का स्वरूप भी बदला है। टेलीविजन एंकर पूर्वग्रह से ग्रस्त नजर आ रहे हैं और सोशल मीडिया फेक न्यूज का प्रसार कर रहा है।

प्रभावी लोकतंत्र को राजनीतिक परिदृश्य में सभी दलों और लोगों के लिए समानता कायम करनी चाहिए। परंतु सत्ताधारी राजनेता बहुत कम अवसरों पर इसका सम्मान करते हैं और चुनावी लाभ के लिए मनमानी करते रहते हैं। राजनीतिक फंड जुटाने की कोशिश में नियमों की मनमुताबिक व्याख्या और हाल में राजनीतिक दलों को कारोबारी चंदे से संबंधित नियमों में बदलाव तथा गोपनीय दान के लिए चुनावी बॉन्ड की व्यवस्था इसका उदाहरण है।

एसोसिएशन ऑफ डेमोक्रेटिक रिफॉर्म के मुताबिक नियम में बदलाव के बाद वित्त वर्ष 2017 और 2018 में कॉर्पोरेट दान का बड़ा हिस्सा एक खास दल को गया। करीब 2700 करोड़ रुपये मूल्य के निर्वाचन बॉन्ड खरीदकर दान किए गए। इसका ब्योरा भी उपलब्ध नहीं है। परंतु सारे संकेतक यही बताते हैं कि बॉन्ड में किए गए दान का अधिकांश हिस्सा दल विशेष को गया।

हमारे पुरखों ने जिस लोकतंत्र का स्वप्न देखा था, वह संकट में है। अगर चुनाव विश्वसनीय तरीके से नहीं हुए तो वे मौजूदा सरकार की संवैधानिकवैधता पर सवाल खड़े करते हैं। कानून, नियम और समान परिस्थितियां, चुनाव आचार संहिता और स्वतंत्र चुनाव आयोग द्वारा उनका कड़ाई से क्रियान्वयन आदि केवल शुरुआत हैं।

काफी कुछ इस बात पर निर्भर करता है कि क्या हम ऐसा मानक व्यवहार तैयार कर पाते हैं जो किसी समूह के प्रति घृणा को नकार सके, विरोध केअधिकार का सम्मान करे और राजनीतिक बहस के ऐसे मानक तय करे जो आगे चलकर परंपरा बन जाएं। नागरिक और मतदाता के रुप में भी हमें राजनीतिक वर्ग से व्यवहार के ऊंचे व्यवहार मानक की अपेक्षा करनी चाहिए।

फसल मूल्य का पूर्वानुमान लगाने वाली सेवा किसानों की मददगार

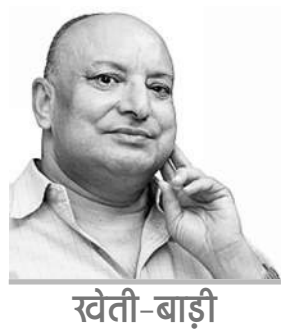

खेती-बाड़ी

सुरिंदर सूद

कृषि विपणन की एक खास खामी पर अभी तक पर्याप्त ध्यान नहीं दिया गया है। विभिन्न फसलों के अनुमानित मूल्य व्यवहार यानी बाजार बुद्धिमत्ता के बारे में अग्रिम सूचना का भारी अभाव रहा है। यह जानकारी किसानों के लिए सूझबूझ भरा फैसला लेने के लिए महत्त्वपूर्ण है ताकि वे फैसला कर सकें कि किस फसल को कितना उगाया जाए और उसे कब एवं कहां बेचा जाए? कृषि बाजार के बारे में सूचना देने वाली मौजूदा सेवाओं में सामान्य तौर पर केवल बड़ी मंडियों में प्रभावी कीमतों का ही उल्लेख होता है। ये जानकारियां किसानों के लिए सीमित उपयोगिता वाली ही होती हैं क्योंकि अलग स्थानों पर अलग समय पर इनके भावों में अंतर होता है। सब्जियों और फलों जैसे बड़े पैमाने पर उगाए जाने वाले और जल्द खराब होने वाले उत्पादों के दाम में काफी उतार-चढ़ाव देखा जाता है। किसान बेहतर रिटर्न के लिए इनकी खेती करते हैं लेकिन भरोसेमंद विपणन परामर्श नहीं होने से उनकी मेहनत अक्सर बेकार हो जाती है।

विपणन संबंधी परामर्श तमाम दूसरी वजहों से भी जरूरी है। कृषि क्षेत्र में कीमत पड़ताल और मूल्य जोखिम प्रबंधन के तरीके और साधन काफी सीमित हैं। दुनिया भर में मूल्य पड़ताल और मूल्य जोखिम हेजिंग के लिए वायदा कारोबार और उससे भी बढ़कर विकल्प कारोबार साधनों का इस्तेमाल किया जाता है लेकिन भारत में अधिकांश खाद्य उत्पादों के लिए इनकी इजाजत नहीं है। इसके अलावा सरकार द्वारा निर्धारित मूल्य पर कृषि उत्पादों की सरकारी खरीद और भाव-अंतर भुगतान प्रणाली जैसी मौजूदा मूल्य आश्वासन योजनाएं किसानों के एक छोटे हिस्से को ही संरक्षण दे पाई हैं। बाकी किसान अपनी उपज को नजदीकी मंडियों में उसी भाव पर बेच देते हैं जो शोषक कारोबारी उन्हें देता है। भले ही किसान इस बात से बेखबर नहीं हैं कि उपज की कीमत खरीद-बिक्री का असली समय खत्म होने के बाद ही बढ़ती है फिर भी वे उपज की बिक्री को देर तक टाल नहीं सकते हैं क्योंकि उन्हें आगे होने वाली मूल्य वृद्धि का कोई अंदाजा ही नहीं होता है। उपज को अपने पास रखना किसान के लिए उल्टा नतीजा देने वाला भी साबित हो सकता है अगर आलू, प्याज और टमाटर जैसी उपज के भंडारण पर आई लागत की भरपाई नहीं हो पाती है।

> निजी कंपनियां किसानों की विभिन्न जरूरतों को पूरा करने के लिए कहीं अधिक विविध एवं मूल्य-वर्द्धित सूचनाएं देने के नए मॉडल ईजाद कर सकती हैं। सहकारिता क्षेत्र की खाद कंपनी इफ्को की तरफ से शुरू की गई किसान संचार सेवा इस मामले में एक नजीर बन सकती है

ऐसे में उपज की खरीद-बिक्री के बारे में मिलने वाली भरोसेमंद सलाह से होने वाले लाभों का प्रदर्शन कुछ पायलट परियोजनाओं में देखने को मिला है। सार्वजनिक क्षेत्र के कुछ शोध निकायों की तरफ से ये पायलट परियोजनाएं चलाई गई हैं। इनमें सबसे अहम परियोजना भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद (आईसीएआर) ने चलाई थी और 2017-18 की वार्षिक रिपोर्ट में इसका उल्लेख भी किया है। देश भर में फैले 14 संस्थानों के नेटवर्क के जरिये लागू की गई इस पायलट परियोजना में 40 से अधिक कृषि उत्पादों के बारे में साल भर में दो बार मूल्य पूर्वानुमान जारी करना था। उपज के बारे में पहला पूर्वानुमान फसल की बुआई के पहले किया जाना था जबकि दूसरा पूर्वानुमान फसल कटाई के समय लगाया जाना था। इसके बारे में बताने के लिए संचार के हरसंभव साधन का इस्तेमाल किया गया। निजी संपर्क, एसएमएस, पर्चों का वितरण, टीवी, रेडियो, कृषि विश्वविद्यालयों की वेबसाइट, फेसबुक, व्हाट्सऐप और यूट्यूब के जरिये किसानों को इन पूर्वानुमान के बारे में जानकारी दी गई।

इस सेवा के असर का विश्लेषण करने पर पता चला कि उत्तर प्रदेश के आलू उत्पादक किसानों ने बनारस हिंदू विश्वविद्यालय के विशेषज्ञों से मिली सलाह पर अमल करते हुए अपनी उपज मार्च-अप्रैल के परंपरागत वक्त के बजाय मई के महीने में बेची तो उन्हें औसत भाव से 30-40 फीसदी ऊंची कीमतें मिलीं। इस तरह उन्हें प्रति क्विंटल 100-150 रुपये की अधिक आय हुई। इसी तरह गुजरात के कपास उत्पादक किसानों ने जूनागढ़ स्थित राज्य कृषि विश्वविद्यालय की तरफ से मिली सलाह पर अमल करते हुए औसतन 36,000 रुपये अधिक कमाए।

अगर सार्वजनिक क्षेत्र की इकाइयां किसानों को इतनी लाभप्रद सलाह दे सकती हैं तो निजी कंपनियां शायद कहीं बेहतर तरीके से इस काम को अंजाम दे सकती हैं। निजी कंपनियां किसानों की विभिन्न जरूरतों को पूरा करने के लिए कहीं अधिक विविध एवं मूल्य-वर्द्धित सूचनाएं देने के नए मॉडल ईजाद कर सकती हैं। सहकारिता क्षेत्र की खाद कंपनी इफ्को की तरफ से शुरू की गई किसान संचार सेवा इस मामले में एक नजीर बन सकती है। इफ्को ने भारती एयरटेल और स्टार ग्लोबल रिसोर्सेज लिमिटेड के सहयोग से किसानों को फसल कीमत का पूर्वानुमान देना शुरू किया।

वर्ष 2017-18 में इफ्को किसान संचार सेवा ने करीब 20 लाख किसानों को स्थानीय भाषाओं में करीब 75,000 वॉयस संदेश भेजे थे। इस दौरान बाजार के अनुमानित भावों के अलावा खेती एवं पशुपालन से जुड़े अन्य पहलुओं, मौसम पूर्वानुमान, सरकारी योजनाएं और कृषि जगत से संबंधित समाचार भी प्रसारित किए गए। अगर कृषि व्यवसाय में लगी दूसरी कंपनियां भी इसी तरह की परामर्श सेवाएं लेकर आती हैं तो कृषि उपज की मार्केटिंग करना अधिक लाभदायक हो सकेगा। इससे भारतीय कृषि भी अधिक मुनाफा कमाने का क्षेत्र बन सकेगी।

कानाफूसी

एकजुट कारोबारी

कॉन्फेडरेशन ऑफ आल इंडिया ट्रेडर्स का दावा है कि वह तीन वर्षों से कारोबारियों को इस बात के लिए प्रेरित कर रहा है कि वे लोकसभा चुनाव में एक स्वतंत्र वोट बैंक के रूप में अपना अस्तित्व कायम करें। संगठन का दावा है कि दिल्ली में करीब 19 लाख कारोबारी हैं। ये कारोबारी 30 लाख लोगों को रोजगार प्रदान करते हैं और वे सभी सात लोकसभा सीटों पर चुनावी नतीजों को प्रभावित करने की हैसियत रखते हैं। संगठन का कहना है कि वह एक दल विशेष के पक्ष में अभियान शुरू करने की योजना बना रहा है। संगठन के अध्यक्ष प्रवीण खंडेलवालभाजपा के टिकट पर विधानसभा चुनाव भी लड़ चुके हैं और वह इस बार भी चांदनी चौक लोकसभा सीट से पार्टी टिकट पर चुनाव लड़ना चाहते हैं। खंडेलवाल कहते हैं कि संगठन ने कारोबारियों के साथ करीब 200 बैठक की है। उन्होंने दावा किया कि यह पहला मौका होगा जब कारोबारी मतदाता एकजुट होकर मतदान करेंगे।

बिजली का झटका!

छत्तीसगढ़ में कांग्रेस विधायक और मंत्री कवासी लखमा ने उस वक्त हलचल मचा दी जब उन्होंने कहा कि मतदाता अगर इलेक्ट्रॉनिक वोटिंग मशीन (ईवीएम) में दूसरे नंबर का बटन दबाएंगे तो उन्हें बिजली का झटका लगेगा। वह कांकेर जिले के कोरार क्षेत्र में मतदाताओं को संबोधित कर रहे थे। जाहिर सी बात है भारतीय जनता पार्टी के नेताओं ने इस पर कड़ी आपत्ति जताते हुए मामले को निर्वाचन आयोग के समक्ष ले जाने की बात कही है। लखमा को इस क्षेत्र का दिग्गज कांग्रेस नेता माना जाता है। 61 वर्षीय लखमा न केवल पांच बार विधायक रह चुके हैं बल्कि वह मौजूदा प्रदेश सरकार में आबकारी, उद्योग एवं वाणिज्य मंत्री भी हैं। लोकसभा चुनाव के लिए राज्य में तीन चरणों में मतदान होना है।

आपका पक्ष

चीनी ऐप टिक टॉक पर कार्रवाई

चीनी मोबाइल ऐप टिक टॉक को भारत में राहत मिलती हुई नहीं दिख रही है। अभी कंपनी उच्चतम न्यायालय के फैसले से उबर नहीं पाई थी कि एक और बड़ी खबर आ गई। केंद्र सरकार ने गूगल और ऐपल से इस मामले में कार्रवाई करने को कहा है। सरकार ने दोनों कंपनियों को साफ कहा है कि वह अपने प्लेटफॉर्म से इस ऐप को हटा दे। कंपनी मद्रास उच्च न्यायालय के फैसले के खिलाफ उच्चतम न्यायालय गई थी जिसमें टिक टॉक ऐप पर बैन लगाने की बात थी। लेकिन उच्चतम न्यायालय ने फैसले पर रोक लगाने से मना कर दिया। इस फैसले के अगले दिन ही इलेक्ट्रॉनिक्स एवं सूचना तकनीक मंत्रालय ने टिक टॉक के खिलाफ यह कदम उठाया। मद्रास उच्च न्यायालय ने 3 अप्रैल को सरकार को टिक टॉक ऐप पर रोक लगाने का आदेश दिया था। इसके बाद मामला उच्चतम न्यायालय पहुंचा। उच्चतम न्यायालय ने यह कहते हुए

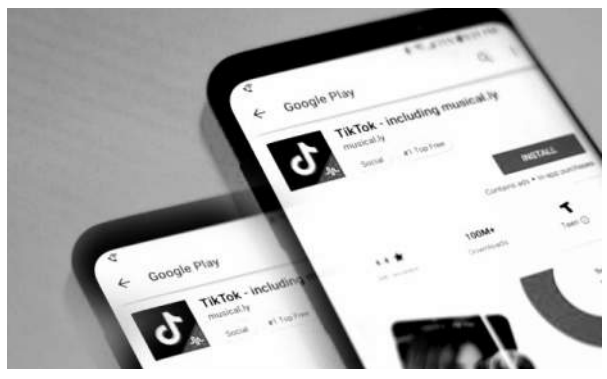

अपील खारिज कर दी कि अभी मामला अदालत में है। अत: वह इस पर फैसला नहीं दे सकता। मामले की अगली सुनवाई 22 अप्रैल को होगी। दूसरी तरफ टिक टॉक का कहना है कि उनका इस बात पर कोई नियंत्रण नहीं है कि उनके ऐप पर कोई क्या डालता है। फिलहाल बाजार विश्लेषक और डेटा फर्म सेंसर के मुताबिक पहली

केंद्र सरकार ने गूगल तथा ऐपल से अपने प्लेटफॉर्म से टिक टॉक ऐप हटाने को कहा

तिमाही में ऐप स्टोर और गूगल प्ले स्टोर में टिक टॉक दुनिया भर में तीसरा सबसे ज्यादा इंस्टॉल किया जाने वाला ऐप था। पिछली तिमाही में भी इसकी रैंकिंग इतनी ही थी। टिक टॉक ने मार्च तिमाही में 18.8 करोड़ नए उपभोक्ता बनाए जिसमें भारत की हिस्सेदारी 8.86 करोड़ थी। पिछले साल ऐप के 50 करोड़ उपभोक्ताओं में भारत की हिस्सेदारी 39 फीसदी से ज्यादा थी।

प्रियंबदा, गोरखपुर

अवमानना के बढ़ते मामले चिंताजनक

देश की न्यायपालिका के विभिन्न स्तरों एवं शाखाओं द्वारा पारित आदेश अथवा जारी किए गए दिशानिर्देशों के संबंधित व्यक्तियों अथवा संस्थाओं द्वारा नहीं माने जाने संबंधी खबरें आए दिन सुर्खियों में रहती हैं। अदालत के आदेश की नाफरमानी के मामले में सरकारी एजेंसियां सबसे आगे देखी जाती हैं। वर्ष 2017 की एक रिपोर्ट के अनुसार राजस्थान में सरकारी एजेंसियों के खिलाफ अदालत की अवमानना के 3,951 मामले आए। सरकारी विभागों के खिलाफ इतनी भारी संख्या में अवमानना के मामले बनने के प्रमुख कारणों में संबंधित विभाग के कर्मियों की अज्ञानता, अक्षमता, कार्यपालन के प्रति इच्छाशक्ति एवं जवाबदेही का अभाव, दूसरे विभागों से समन्वय का अभाव शामिल है। सरकारी लापरवाही का खमियाजा याचिकाकर्ता सहित सभी हितधारकों को भुगतना पड़ता है। साथ ही जनता के बीच न्यायपालिका की छवि भी धूमिल होती है। व्यापक जनहित से संबंधित कई मामलों को लेकर न्यायप्रणाली की तमाम कथित जटिलताओं को दरकिनार करते हुए जब कोई व्यक्ति हिम्मत कर जनहित याचिका दायर करता है तो लोगों के बीच उम्मीद बंधती है। ऐसे मामलों में आए न्यायपालिका के सकारात्मक फैसले से उम्मीद विश्वास में बदल जाती है। लेकिन जब ऐसे फैसले का निर्देश धरातल पर क्रियान्वित होते नहीं दिखता तो लोगों के बीच अविश्वास का वातावरण बनता है।

पाठक अपनी राय हमें इस पते पर भेज सकते हैं : संपादक, बिजनेस स्टैंडर्ड लिमिटेड, 4, बहादुर शाह जफर मार्ग, नई दिल्ली - 110002. आप हमें ईमेल भी कर सकते हैं : lettershindi@bsmail.in
उस जगह का उल्लेख अवश्य करें, जहां से आप ईमेल कर रहे हैं।